

**प्रिय युवा दंधुओं और बहनों,**

16 मई, 2005

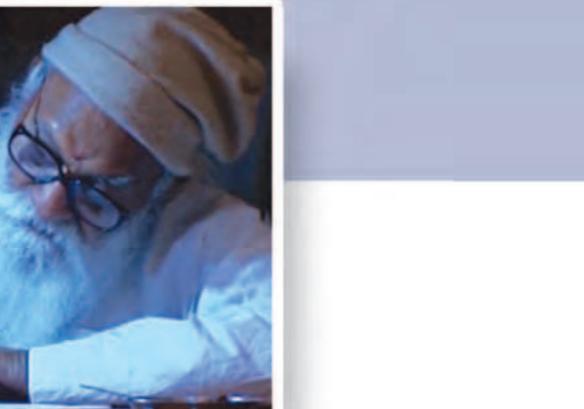
गत 24 दिसम्बर, 2004 के पत्र में मैंने लिखा था कि 'संसद के दोनों सदनों के सांसद मिलकर स्वयं अपना वेतन, भ्रता तथा ऐनशन बढ़ा लेते हैं। जबप्रतिनिधियों द्वारा अपनाया गया यह तरीका न नैतिक है न ही प्रशासनिक नियमों के अनुकूल है।' सांसदों की इस स्वार्थसिद्धि को शाम लोगों की नजर में ला देने के बाद लोकसभा स्थीर मानवीय सामनाथ नी चटर्जी ने एहसान सांसदों के वेतन तथा भ्रतों बढ़ाने के लिए एक स्वतंत्र व्यवस्था खड़ी करने के लिए प्रयास प्रारंभ किए हैं। अतः मैं उनका हार्दिक अभिनवन करता हूँ।

फिल्म इतने भर से भारत के भविष्य-विमर्श का मार्ग प्रश्नस्त नहीं होगा। अभी-अभी कुछ ही दिन पूर्व शहीद भगत सिंह के लोक सभा परिसर में स्मारक बनाने के लिए आयोजित सांसदों के सम्मेलन में महामहिम राष्ट्रपति गहोदय ने विद्यायकों की खरीद-फोरेख पर चिंता व्यक्त की है। इस खरीद-फोरेख के घृणित आचरण से पाठियों के बड़े से बड़े नेता स्वयं को अलिप्त नहीं कह सकते। सत्ता पाने या सत्ता में बने रहने के लिए चाहें जो किया जा रहा है, यह किसी से छिपा नहीं है।

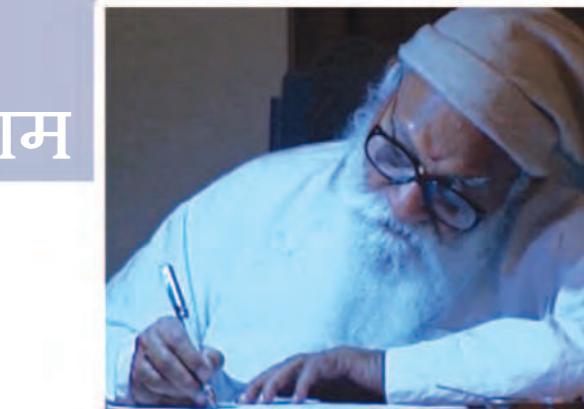
सन् 2020 तक देश को स्वावलंघी बनाने के राष्ट्रपति के सपने को राजनीतिक दलों के उपर्युक्त आचरण से बुक्सान पहुँचने की संभावना से राष्ट्रपति को चिंता होने लगी है। अन्यथा वे विद्यायकों के खरीद-फोरेख के विषय की खुले शब्दों में आलोचना नहीं करते।

स्वतंत्र भारत के नेतृत्व ने अपने गोरापूर्ण अतीत से संबंध-विच्छेद कर लिया है। अपने देश के लिए, अपनी प्रतिभा से, अपने जीवन-मूल्यों पर आधारित संविधान विमर्श करने में अपनी स्वतंत्र वृद्धि काम में ही नहीं लाई गयी। सवा सो साल से अधिक हमें

**स्वतंत्र भारत के साजनेताओं ने सामाजिक जीवन की महता को नहीं समझा। सत्ता पाने के लिए उन्होंने समाज को जिस तरह चाहा, नोचा-खासोटा है।**



## नानाजी की पाती युवाओं के नाम



नेता लेंगी भावनाओं को भड़काकर सत्ता पाने के लिए देश की एकता को हानि पहुँचा रहे हैं। मजहब के आधार पर देश का विभाजन हुआ। इससे सबक लेकर देश के सभी नागरिकों में सह-अस्तित्व की भावना विकसित करने के स्थान पर सत्ता के लालच में नागरिकों में मजहब के आधार पर अत्यन्त बढ़ाने में ही लगे हुए हैं।

विश्व में भारत ही एक ऐसा देश है जिसकी नजर परायी की धन-संपदा पर कहीं नहीं रही। प्रभु राम

परायी के राजा वालि को मृत्युदण्ड दिया। किन्तु उसके राज्य पर उसी के भाई सुरीय को विश्वा। सोने की लंका पर विनय पाक वहां का सिंहासन

रावण के बूँ विश्वरूपकम्' की अवधारणा को साफ़ा करने वाली भारतीय संस्कृत अपने समाज में नहीं पचारती।

दुर्भाग्यवश, स्वतंत्रता प्राप्त होते ही सामाजिक, सांस्कृतिक तथा धार्मिक नेताओं भी अपना-अपना मूलभूत दायित्व छोड़कर राजनीति की ए-सी-सी-डी न समझते हुए भी सत्ता-संघर्ष में कूद पड़े हैं। फलस्वरूप, भारतीय जीवन की कर्तव्य-पालन की परंपरा जीवन से ओड़ाइल होकर, अधिकार-लालसा का व्यक्तिवादी जीवन समाज में गहराता जा रहा है।

इस आकांक्षा को व्यावर में रखकर ही हमारे स्वातंत्र्य संग्राम के भग्नांशों ने बार-बार दोहराया था कि हमारा स्वातंत्र्य संग्राम केवल अपनी राजसत्ता विप्रिय लौटा लेने के लिए नहीं, अपितु विश्व भर में सह-अस्तित्व का स्वेच्छा, सहयोगपूर्ण तथा प्रगतिशील जीवन का अनुकूलन प्रस्तुत करने के लिए है। इससे स्पष्ट होता है कि स्वतंत्र भारत की दिशा क्या होनी चाहिए थी।

अपने परंपरागत चरित्र के अनुसार अपने लोकतंत्र का विकास करना हमारा दायित्व था। लोकतांत्रिक रचना के लिए चुनाव-प्रक्रिया अविवार्य है। किन्तु चुनाव-प्रक्रिया तक ही सीमित है। उन्हें लोकतंत्र के एपी विकसित रूप की आवश्यकता अनुभव ही नहीं होती। कारण, उनमें नानीतियां की भावना अभी विकसित होना चाहिए है। वे अभी तक उपभोग के उपासक बने रहने की ही अवस्था में हैं। उपभोग और अधिकाधिक उपभोग करना ही उनके जीवन का लक्ष्य

**विश्व में कहीं भी अनुकूलीय लोकतंत्र का नमूना दिखाई नहीं देता। विकसित करें जाने वाले परिचमी देशों का चरित्र लोकतांत्रिक विकास के अनुकूल है ही नहीं। दुनियाभर के अविकसित एवं उन्हें संयोगश्वर जहां बहुमत प्राप्त है, वहां भी उन्हें पार्टी में अची गुरुबाजी पर काढ़ा पाना मुश्किल हो रहा है। ऐसी हालत में शासन में व्याप्त भ्रष्टाचार को चिंता होने लगी है। अन्यथा जीवन-लोकतंत्र के आधार पर वेतन वेतन के लिए नहीं देता। विकसित करें जाने वाले परिचमी देशों का चरित्र लोकतांत्रिक विकास के अनुकूल है ही नहीं।**

